गायत्री की दैनिक साधना एवं यज्ञ पद्धति

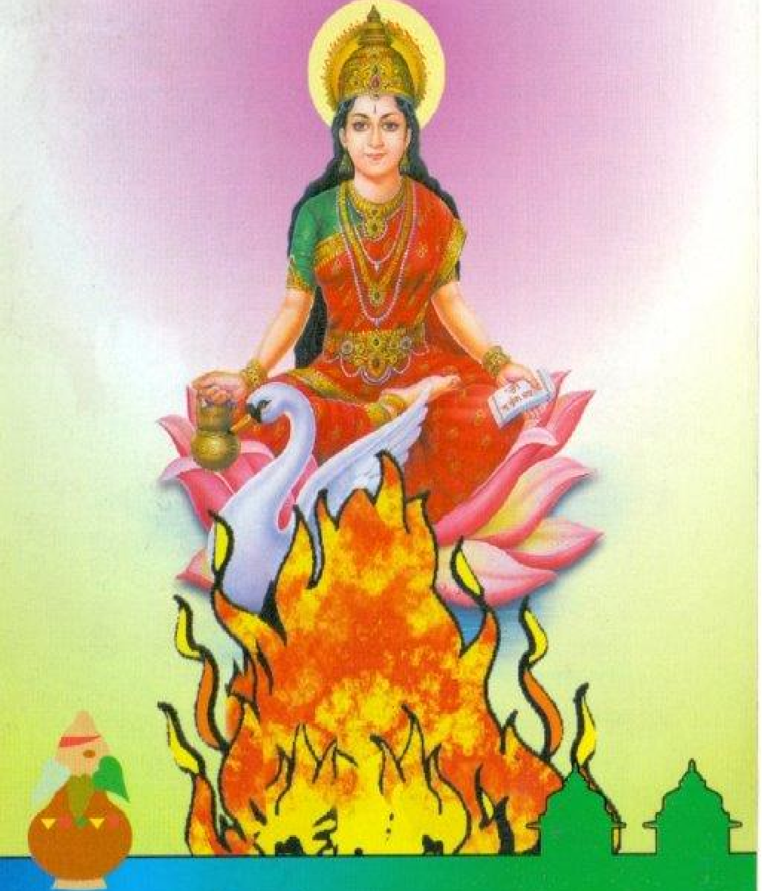

गायत्री के जप की महिमा

गायत्री मंत्र का सच्चे हृदय से जप करने से मनुष्य का आत्मिक कायाकल्प हो जाता है और उसे ऐसा जान पड़ता है कि उसके हृदय से सब प्रकार के विकार दूर होकर, सतोगुणी तत्त्वों की अभिवृद्धि हो रही है। इसके प्रभाव से विवेक, दूरदर्शिता, तत्त्वज्ञान का उदय होकर अनेक अज्ञान जनित दुःखों का निवारण होता है। गायत्री-साधना से मनुष्य के अंतर्मन में ऐसी दृढ़ श्रद्धा का आविर्भाव होता है कि वह सब प्रकार की विघ्न-बाधाओं और प्रतिकूल परिस्थितियों को हँसते-हँसते सहन कर लेता है। भली-बुरी सब प्रकार की अवस्थाओं में वह साम्यभाव रखकर शांतिपूर्वक जीवन व्यतीत करता है। उसको संसार की सबसे बड़ी शक्ति आत्मबल प्राप्त हो जाता है, जिसके द्वारा वह अनेक प्रकार के सांसारिक लाभों और मनोकामनाओं को भी सहज में प्राप्त कर लेता है।

गायत्री का मुख्य प्रभाव केवल कुछ सांसारिक लाभ प्राप्त कर लेना अथवा विपत्तियों से रक्षा पा जाना नहीं है। उसका सबसे बड़ा प्रभाव तो यह है कि वह मनुष्य के मन को, अंतःकरण को, मस्तिष्क को एवं विचारधारा को सन्मार्ग की तरफ प्रेरित करती है और एक सच्चे मनुष्यत्व का विकास करती है। सत्तत्त्व की वृद्धि करना ही इसका प्रधान कार्य है। साधक जब इस महामंत्र के अर्थ पर विचार करता है, तो वह समझ जाता है कि संसार की सबसे बड़ी समृद्धि, जीवन की तथा सबसे बड़ी सफलता यही है कि हमारी बुद्धि, शुद्ध हो जाएँ और हम सत्य के मार्ग पर चलने लगें। इस विचार के प्रभाव से उसकी मानसिक और शारीरिक क्रियाएँ सतोगुणी होने लग जाती हैं तथा वह आध्यात्मिक क्षेत्र में अग्रसर होता हुआ अपना और दूसरों का कल्याण करने में समर्थ होता है।

गायत्री मंत्र की साधना करने से सब तरह की कामनाएँ सिद्ध होती हैं। जो व्यक्ति निष्काम भाव से उसका जप करते रहते हैं

उनको सब प्रकार के सांसारिक फलों की प्राप्ति के साथ मुक्ति की प्राप्ति होती है। इसीलिए हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियों ने संसार के कल्याणार्थ इसको प्रकट किया और परंपरा द्वारा इसकी उपासना अनिवार्य रूप से प्रचलित की।

अपने युग की परिस्थितियाँ अपने ढंग की अनोखी हैं। इनमें न तो कंस और रावण की तरह आक्रमण-उत्पीड़न है और न दुर्भिक्ष, दुर्घटना जैसा कोई दैवी संकट, फिर भी स्थिति की विपन्नता ऐतिहासिक महासंकटों की तुलना में कहीं भयानक है। विपत्ति का नया स्वरूप है—आस्था संकट। मानवीय अंतराल में ऐसी मान्यताओं ने जड़ जमा ली है जिन्हें आदर्शों के प्रति अनास्था कह सकते हैं। संकीर्ण स्वार्थपरता पर आधारित विलासी, अहंकारी प्रवृत्ति ही आज जन-जन की आराध्य बन गई है। लोभ और मोह की ललक दावानल की तरह बढ़ रही है और अपनी लपटों में उन सबको लपेट रही है, जिन्हें मानवी गरिमा के रूप में देखा और जाना जाता रहा है।

अपने युग का महादैत्य आस्था संकट है। वह जनमानस की गहरी परतों तक प्रवेश पाने में सफल हो गया है। इतनी गहराई तक भौतिक उपाय-उपचारों का प्रवेश नहीं हो सकता है। दलदल में फँसे हाथी को चतुर हाथी ही अपनी बुद्धिमत्ता के सहारे बाहर निकाल पाते हैं। अनास्था के निराकरण में भाव-श्रद्धा की प्रखरता ही समर्थ हो सकती है। इसलिए इस बार युग-अवतार ऋतंभरा प्रज्ञा के रूप में हो रहा है। गायत्री महाशक्ति का अवतरण ही अपने युग के आस्था संकट को दूर करने का एकमात्र आधार हो सकता है।

साधकों के लिए कुछ आवश्यक नियम

गायत्री-साधना करने वालों के लिए कुछ आवश्यक जानकारियाँ नीचे दी जाती हैं—

(१) शरीर को शुद्ध करके साधना पर बैठना चाहिए।

(२) साधना के समय शरीर पर हलके ढीले वस्त्र रहने चाहिए।

(३) साधना के लिए एकांत, खुली हवा की ऐसी जगह ढूँढ़नी चाहिए, जहाँ का वातावरण शांतिमय हो। खेत, बगीचा, नदी का किनारा, देवमंदिर इस कार्य के लिए उपयुक्त होते हैं।

(४) धुला हुआ वस्त्र पहनकर साधना करना उचित है।

(५) पालथी मारकर कमर सीधी करके बैठें।

(६) रीढ़ की हड्डी को सदा सीधा रखना चाहिए।

(७) बिना बिछाए जमीन पर साधना करने के लिए नहीं बैठना चाहिए। इससे साधना काल में उत्पन्न होने वाली शारीरिक विद्युत जमीन में उतर जाती है। घास या पत्तों से बने हुए आसन सर्वश्रेष्ठ होते हैं।

(८)माला तुलसी या चंदन की लेनी चाहिए।

(९)प्रातःकाल ब्रह्ममुहूर्त में जप आरंभ किया जा सकता है। सूर्य अस्त होने के दो घंटे बाद तक जप समाप्त कर लेना चाहिए।

(१०) साधना के लिए चार बातों का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए। (अ) चित्त एकाग्र रहे, मन इधर-उधर न उछलता फिरे। यदि चित्त बहुत दौड़े तो उसे गायत्री माता की सुंदर छवि के ध्यान में लगाना चाहिए। (ब) माता के प्रति अगाध श्रद्धा और विश्वास हो, अविश्वासी और शंकितमति वाले पूरा लाभ नहीं पा सकते। (स)दृढ़ता के साथ साधना पर अड़े रहना चाहिए। अनुत्साह, मन उचटना, नीरसता प्रतीत होना, जल्दी लाभ न मिलना, अस्वस्थता तथा अन्य सांसारिक कठिनाइयों का मार्ग में आना साधना के विघ्न हैं। इन विघ्नों से लड़ते हुए अपने मार्ग पर दृढ़तापूर्वक बढ़ते हुए चलना चाहिए। (द) निरंतरता साधना का आवश्यक नियम है। अत्यंत कार्य होने या विषम स्थिति आ जाने पर भी किसी न किसी रूप में चलते-फिरते सही, पर गायत्री माता की उपासना अवश्य कर लेनी चाहिए। किसी भी दिन नागा या

भूल न करनी चाहिए। समय को रोज-रोज न बदलना चाहिए। कभी सवेरे, कभी दोपहर, कभी तीन बजे, तो कभी दस बजे, ऐसी अनियमितता ठीक नहीं। इन चार नियमों के साथ की गई साधना बड़ी प्रभावशाली होती है।

(११) कम से कम एक माला अर्थात १०८ मंत्र नित्य जपने चाहिए, इससे अधिक जितना बन पड़े उत्तम है।

(१२) अपनी पूजा स्थली पर इष्ट के सम्मुख बैठकर उपासना करें। संभव हो तो प्रकाश की ओर, सूर्य की ओर मुँह रखना उचित है।

(१३) पूजा के लिए फूल न मिलने पर चावल या नारियल की गिरी को कद्दूकस पर कसकर उसके बारीक पत्रों को काम में लेना चाहिए।

(१४) मंत्र जप इस प्रकार करना चाहिए, जिसमें कंठ, ओंठ, जिह्वा तो चलते रहें, परंतु उच्चारण इतना मंद हो कि पास में बैठा हुआ व्यक्ति भी उसे ठीक तरह से सुन न सके।

(१५) पूजा के समय कलश रूप में जल-पात्र रखना चाहिए और अग्नि की साक्षी के लिए दीपक या धूपबत्ती जला लेनी चाहिए। इस प्रकार अग्नि और जल की साक्षी में किया हुआ जप अधिक प्रभावशाली होता है। आचमन के लिए जल-पात्र अलग से रखना चाहिए। पूजा के अंत में कलश रूप में स्थापित जल सूर्य की दिशा में प्रातःकाल पूर्व में और सायंकाल पश्चिम में अर्घ्य जल को चढ़ा दिया जाए।

(१६) महिलाएँ मासिक धर्म के दिनों में माला सहित जप न करें। उँगलियों पर गिनकर मानसिक रूप से जप किसी भी स्थिति में किया जा सकता है।

(१७) गायत्री को गुरुमंत्र कहा गया है। जो अपने तप-प्राण एवं पुण्य का अंश देने में समर्थ हों, ऐसे अधिकारी गुरु से गायत्री की मंत्रदीक्षा लेकर उपासना करना फलप्रद होता है।

(१८) स्त्रियों को भी पुरुषों की तरह ही गायत्री उपासना का पूर्ण अधिकार है।

(१९) यज्ञोपवीत धारण करके गायत्री उपासना करना अधिक श्रेयस्कर है, पर किसी कारणवश कोई उसे धारण न कर सके तो भी गायत्री उपासना बिना यज्ञोपवीत के हो ही न सकेगी ऐसा प्रतिबंध नहीं है।

(२०) रात्रि में जप हो सकता है, पर उस समय मानसिक जप करना चाहिए।

(२१) देर तक एक पालथी से एक आसन से बैठे रहना कठिन होता है, इसलिए जब एक तरह से बैठे-बैठे थक जाएँ, तब उन्हें बदला जा सकता है। इसे बदलने में कोई दोष नहीं है।

(२२) मल-मूत्र त्याग या किसी अनिवार्य कार्य के लिए साधना के बीच में उठना पड़े तो शुद्ध जल से हाथ-मुँह धोकर, दोबारा बैठना चाहिए और विक्षेप के लिए एक माला अतिरिक्त जप प्रायश्चितस्वरूप करना चाहिए।

(२३) यदि किसी दिन अनिवार्य कारण से साधना स्थगित करनी पड़े तो. दूसरे दिन एक माला अतिरिक्त जप दंडस्वरूप करना चाहिए।

(२४) जन्म, मृत्यु का सूतक हो जाने पर शुद्धि होने तक माला आदि की सहायता से किया जाने वाला विधिवत जप स्थगित रखना चाहिए। केवल मानसिक जप, मन ही मन चालू रख सकते हैं।

(२५) लंबे सफर में होने पर, स्वयं रोगी हो जाने या गंभीर रोगी की सेवा में संलग्न रहने की दशा में स्थान आदि पवित्रता की सुविधा नहीं रहती, तो ऐसी दशा में मानसिक जप बिस्तर पर पड़े-पड़े, रास्ता चलते या किसी पवित्र-अपवित्र दशा में किया जा सकता है। मानसिक जप का अर्थ है—बिना ओंठ हिलाएँ मन ही मन जप करना।

(२६) साधक का आहार-विहार सात्विक होना चाहिए। आहार में सतोगुणी, सादा. सुपाच्य, ताजे तथा पवित्र हाथों से बनाए हुए पदार्थ होने चाहिए। अधिक मिरच, मसाले वाले, तले हुए पकवान,

मिष्टान्न, बासी-बुसे, दुर्गंधित, मांस, नशीले, अभक्ष्य, उष्ण, दाहक, अनीति-उपार्जित, गंदे मनुष्यों द्वारा बनाए हुए, तिरस्कारपूर्वक दिए हुए भोजन से जितना बचा जा सके, उतना ही अच्छा है।

(२७) व्यवहार जितना ही स्वाभाविक, धर्मसंगत, सरल एवं सात्विक रह सके, उतना ही उत्तम है। फैशनपरस्ती, रात्रि में अधिक जागना, दिन में सोना, सिनेमा, नाच-रंग अधिक देखना, परनिंदा, छिद्रान्वेषण, कलह, दुराचार, ईर्ष्या, निष्ठुरता, आलस्य, प्रमाद, मद, मात्सर्य से जितना बचा जा सके, बचने का प्रयत्न करना चाहिए।

(२८) यों ब्रह्मचर्य तो सदा ही उत्तम है, पर गायत्री अनुष्ठान के दिनों में विशेष आवश्यक होता है।

अनुष्ठान के दिनों में कुछ विशेष नियमों को पालन करना पड़ता है, जो इस प्रकार है— (१) दाढ़ी के सिवाय सिर के बाल न कटाएँ, दाढ़ी के बाल अपने हाथ से ही बनाएँ। (२) चारपाई पर न सोएँ, तख्त या जमीन पर सोना चाहिए। (३) इन दिनों अधिक दूर नंगे पैर न फिरें। इन दिनों चमड़े के जूते-चप्पल नहीं पहनने चाहिए, अन्य वस्तुओं से निर्मित जूते, चप्पल प्रयोग कर सकते हैं। (४) इन दिनों एक समय अन्नाहार, एक समय फलाहार लेना चाहिए। (५) अपने शरीर और वस्त्रों से दूसरे का स्पर्श कम होने दें।

(२९) साधना के उपरांत पूजा से बचे हुए अक्षत, धूप, दीप, नैवेद्य, फूल, जल, दीपक की बत्ती, हवन की भस्म आदि को यों ही जहाँ-तहाँ ऐसी जगह नहीं फेंक देना चाहिए, जहाँ पर पैरों से कुचलती फिरे। किसी तीर्थ, नदी, जलाशय, देवमंदिर के पास, जौ, चावल को खेत आदि स्थानों पर जमीन में गाड़ देना या विसर्जन करना चाहिए। चावल चिड़ियों के लिए डाल देना चाहिए। नैवेद्य आदि बालकों को बाँट देना चाहिए । जल को सूर्य के सम्मुख अर्घ्य चढ़ा देना चाहिए।

(३०) गायत्री-साधना माता की चरण वंदना के समान है, यह कभी निष्फल नहीं होती। उलटा परिणाम भी नहीं होता, भूल हो जाने से अनिष्ट होने की भी कोई आशंका नहीं होती। इसलिए निर्भय और प्रसन्नचित्त से उपासना करनी चाहिए।

(३१) जैसे मिठाई को अकेले-अकेले ही चुपचाप खा लेना और समीपवर्ती लोगों को उसे न चखाना बुरा है। वैसे ही गायत्री-साधना को स्वयं तो करते रहना, पर अन्य प्रियजनों, मित्रों, कुटुंबियों को उसके लिए प्रोत्साहित न करना एक बहुत बड़ी बुराई तथा भूल है। इस बुराई से बचने के लिए हर साधक को चाहिए कि अधिक से अधिक लोगों को इस दिशा में प्रोत्साहित करें।

(३२) माला जपते समय सुमेरु (माला के आरंभ का सबसे बड़ा दाना) का उल्लंघन नहीं करना चाहिए। एक माला पूरी करके उसे मस्तक तथा नेत्रों से लगाकर, पीछे की तरफ उलटा ही वापस कर लेना चाहिए। इस प्रकार माला पूरी होने पर हर बार उलटकर ही जप आरंभ करना चाहिए।

दैनिक साधनाक्रम

पूजा स्थान पर इष्टदेव का चित्र, गायत्री माता, गुरुदेव और वंदनीया माताजी का चित्र तथा कलश एवं दीपक जलाकर उचित स्थान पर साथ में रखें। पूजा की सामग्री जो सुलभ हो तथा आचमनीय पंचपात्र आदि रखकर उपासना के लिए बैठें। उपासना विधि का क्रम नीचे दिया जा रहा है।

॥ पवित्रीकरणम् ॥

देवशक्तियाँ पवित्रता प्रिय हैं। उन्हें शरीर और मन से, आचरण और व्यवहार से शुद्ध मनुष्य ही प्रिय होते हैं। इसलिए यज्ञ जैसे देव प्रयोजन में संलग्न होते समय शरीर और मन को पवित्र बनाना पड़ता है। बाएँ हाथ में जल लेकर उसे दाहिने हाथ से ढक लें। अभिमंत्रित जल समस्त शरीर पर छिड़क लें। भावना करें हम पवित्र हो रहे हैं।

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा।
यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं, स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः।।
ॐ पुनातु पुण्डरीकाक्षः, पुनातु पुण्डरीकाक्षः पुनातु।

—वा० पु० ३३.६

।। आचमनम् ।।

वाणी, मन और अंतःकरण की शुद्धि के लिए तीन बार आचमन किया जाता है, मंत्रपूरित जल से तीनों को भाव-स्नान कराया जाता है। हर मंत्र के साथ एक आचमन किया जाए।

ॐ अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा॥ १ ॥
ॐ अमृतापिधानमसि स्वाहा॥ २ ॥
ॐ सत्यं यशः श्रीर्मयि, श्रीः श्रयतां स्वाहा॥३ ॥

—आश्व०गृ०सू० १.२४ मा०गृ०सू० १.९

।। शिखावन्दनम् ।।

मस्तिष्क सद्‌विचारों का केंद्र है। इसमें देवभाव ही प्रवेश करने पाएँ। दाहिने हाथ की उँगलियों को गीला कर शिखा में गाँठ लगाएँ अथवा शिखा स्थान का स्पर्श करें। भावना करें कि देवत्व को धारण करने योग्य प्रखरता, तेजस्विता का विकास हो रहा है।

ॐ चिद्रूपिणि महामाये, दिव्यतेजः समन्विते।
तिष्ठ देवि शिखामध्ये, तेजोवृद्धिं कुरुष्व मे॥

।। प्राणायामः ।।

दोनों हाथ गोद में रखते हुए दोनों नथुनों से श्वास खींचें, थोड़ी देर रोकें, पुनः बाहर निकाल दें। श्वास खींचने के साथ भावना करें कि संसार में व्याप्त प्राणशक्ति और श्रेष्ठता के तत्त्वों को श्वास द्वारा खींच रहे हैं। श्वास रोकते समय भावना करें कि वह प्राणशक्ति, दिव्यशक्ति तथा श्रेष्ठता अपने रोम-रोम में प्रवेश करके उसी में रम रही है। श्वास छोड़ते समय यह भावना करें कि जितने भी दुर्गुण अपने में थे, वे श्वास के साथ निकलकर बाहर

चले गये। नीचे लिखा मंत्र पहले बोला जाए तथा क्रिया बाद में की जाए, प्राणायाम की क्रिया तीन बार करें।

ॐ भूः ॐ भुवः ॐ स्वः ॐ महः, ॐ जनः ॐ तपः ॐ सत्यम्। ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात्। ॐ आपोज्योतीरसोऽमृतं, ब्रह्म भूर्भुवः स्वः ॐ।

॥ न्यासः ॥

शरीर के अति महत्त्वपूर्ण अंगों में पवित्रता की भावना भरना उनकी दिव्य चेतना को जाग्रत करना, न्यास का उद्देश्य है। बाएँ हाथ में जल लें, दाहिने हाथ की उँगलियों को गीला कर निर्देशित अंगों को बाएँ से दाएँ स्पर्श करते चलें। भावना करें सभी अंगों में देवत्व की स्थापना हो रही है।

ॐ वाङ् मे आस्येऽस्तु। (मुख को)
ॐ नसोर्मे प्राणोऽस्तु। (नासिका के दोनों छिद्रों को)
ॐ अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु। (दोनों नेत्रों को)
ॐ कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु। (दोनों कानों को)
ॐ बाह्वोर्मे बलमस्तु। (दोनों भुजाओं को)
ॐ ऊर्वोर्मे ओजोऽस्तु (दोनो जंघाओं को)
ॐ अरिष्टानि मेऽङ्गानि, तनूस्तन्वा मे सह सन्तु।
(समस्त शरीर पर)

—पा.गृ.सू.१.३.२५

॥ पृथ्वी पूजनम् ॥

हम जहाँ से अन्न, जल, वस्त्र, ज्ञान तथा अनेक सुविधा-साधन प्राप्त करते हैं, वह मातृभूमि हमारी सबसे बड़ी आराध्या है। हमारे मन में माता के प्रति जैसी अगाध श्रद्धा होती है, वैसी ही मातृभूमि के प्रति भी रहनी चाहिए और मातृ ऋण से उऋण होने के लिए अवसर ढूँढ़ते रहना चाहिए। अक्षत, पुष्प, जल से धरती माँ का पूजन करें अथवा धरती माँ को हाथ से स्पर्श करके नमस्कार करें। भावना करें कि धरती माता के दिव्य गुण हमें प्राप्त हो रहे हैं।

ॐ पृथ्वि! त्वया धृता लोका, देवि ! त्वं विष्णुना धृता।
त्वं च धारय मां देवि! पवित्रं कुरु चासनम्॥ —सं.प्र.

॥ चन्दनधारणम् ॥

मस्तिष्क को शांत, शीतल एवं सुगंधित रखने की आवश्यकता का स्मरण करने के लिए चंदन धारण किया जाता है। दाहिने हाथ की अनामिका उँगली में चंदन या रोली लेकर निम्न मंत्र बोलते हुए अपने मस्तिष्क पर धारण करें।

ॐ चन्दनस्य महत्पुण्यं, पवित्रं पापनाशनम्।
आपदां हरते नित्यं, लक्ष्मीस्तिष्ठति सर्वदा॥

॥ देव पूजनम् ॥

गुरु परमात्मा की दिव्य चेतना का अंश है, जो साधक का मार्गदर्शन करता है सद्गुरु के रूप में पूज्य गुरुदेव एवं वंदनीया माताजी का अभिनंदन करते हुए उपासना की सफलता हेतु गुरु का आह्वान निम्न मंत्रोच्चार के साथ करें।

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः, गुरुरेवमहेश्वरः।
गुरुरेव परब्रह्म तस्मै श्री गुरवे नमः॥
अखण्डमण्डलाकारं, व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्री गुरवे नमः॥
मातृवत् लालयित्री च, पितृवत् मार्गदर्शिका।
नमोऽस्तु गुरुसत्तायै, श्रद्धा-प्रज्ञायुता च या॥

गायत्री उपासना का आधार-केंद्र महाप्रज्ञा-ऋतंभरा गायत्री हैं। उनका प्रतीक चित्र सुसज्जित पूजा की वेदी पर स्थापित कर निम्न मंत्र के माध्यम से आह्वान करें। भावना करें कि साधक की भावना के अनुरूप माँ गायत्री की शक्ति वहाँ अवतरित हो स्थापित हो रही है।

आयातु वरदे देवि ! त्र्यक्षरे ब्रह्मवादिनि।
गायत्रिच्छन्दसां मातः ब्रह्मयोने नमोऽस्तुते॥
ॐ गायत्र्यै नमः। आवाहयामि,स्थापयामि,ध्यायामि। ततो नमस्कारं करोमि।

माँ गायत्री व गुरुसत्ता के आह्वान व नमन के पश्चात, देवपूजन में घनिष्ठता स्थापना हेतु पंचोपचार किए जाते हैं। इन्हें विधिवत संपन्न करें। जल, चंदन, कलावा, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप तथा नैवेद्य प्रतीक के रूप में आराध्य के समक्ष समर्पित करें। एक-एक करके छोटी-तश्तरी में इन पदार्थों को समर्पित करते चलें। जल का अर्थ है—नम्रता, सहृदयता। चंदन, कलावा, अक्षत का अर्थ है—दृढ़ निष्ठा। पुष्प का अर्थ है—प्रसन्नता, आंतरिक उल्लास। धूप-दीप का अर्थ है—सुगंध व प्रकाश का वितरण, पुण्य-परमार्थ तथा नैवेद्य का अर्थ है—स्वभाव व व्यवहार में मधुरता, शालीनता का समावेश।

ये पाँचों उपचार व्यक्तित्व को सत्प्रवृत्तियों से संपन्न करने के लिए किए जाते हैं। कर्मकांड के पीछे भावना महत्त्वपूर्ण है। पूजन का मंत्र नीचे दिया गया है—

ॐ सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। आवाहयामि, स्थापयामि ध्यायामि।

गन्धाक्षतम्, पुष्पाणि, धूपम्, दीपम् नैवेद्यम् समर्पयामि॥

॥ नमस्कारम् ॥

ॐ नमोऽस्त्वन्ताय सहस्रमूर्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे।
सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्रकोटीयुगधारिणे नमः॥

(पूजा क्रम के पश्चात गायत्री मंत्र का जप प्रारंभ करें।)

॥ जप ॥

गायत्री मंत्र का जप न्यूनतन तीन माला अर्थात घड़ी से प्रायः पंद्रह मिनट नियमित रूप से किया जाए। अभ्यास हो जाने पर यह जप प्रायः पंद्रह मिनट में हो जाता है। अधिक बन पड़े तो अधिक उत्तम। ओंठ, कंठ, मुख हिलते रहें या आवाज इतनी मंद हो कि दूसरे व्यक्ति उच्चारण को सुन न सकें। जप-प्रक्रिया कषाय-कल्मषों, कुसंस्कारों को धोने के लिए पूरी की जाती है।

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्। इस प्रकार मंत्र का उच्चारण करते हुए माला की जाए एवं भावना की जाए कि निरंतर हम पवित्र हो रहे हैं। दुर्बुद्धि की जगह सद्बुद्धि की स्थापना हो रही है।

॥ ध्यान ॥

जप तो अंग-अवयव करते हैं, मन को इष्ट में नियोजित करना पड़ता है। साकार ध्यान में गायत्री माता के आंचल की छाया में बैठने तथा उनका दुलार भरा प्यार अनवरत रूप से प्राप्त होने की भावना करते रहें। निराकार ध्यान में गायत्री के देवता सविता की प्रभातकालीन स्वर्णिम किरणों के शरीर पर बरसने व शरीर में श्रद्धा-प्रज्ञा-निष्ठा रूपी अनुदान उतरने की मान्यता परिपक्व करते चलें। इस प्रकार जप एवं ध्यान के समन्वय से ही चित्त एकाग्र होता है और आत्मसत्ता पर उस कृत्य का महत्त्वपूर्ण प्रभाव भी पड़ता है।

(जप ध्यान के पश्चात समय हो तो गायत्री चालीसा का पाठ भी कर सकते हैं।)

श्री गायत्री चालीसा

दोहा-ह्रीं, श्रीं, क्लीं, मेधा, प्रभा, जीवन ज्योति प्रचंड।
शांति, क्रांति, जाग्रति, प्रगति, रचना शक्ति अखंड॥
जगत जननि, मंगल करनि, गायत्री सुख धाम।
प्रणवों सावित्री, स्वधा, स्वाहा पूरन काम॥

भूर्भुवः स्वः ॐ युत जननी। गायत्री नित कलिमल दहनी॥
अक्षर चौबीस परम पुनीता। इनमें बसें शास्त्र श्रुति, गीता॥
शाश्वत सतोगुणी सतरूपा। सत्य सनातन सुधा अनूपा॥
हंसारूढ़, सितांबर धारी। स्वर्ण कांति शुचि गगन बिहारी॥
पुस्तक, पुष्प, कमंडलु, माला। शुभ्र वर्ण तनु, नयन विशाला॥
ध्यानधरत पुलकित हिय होई। सुख उपजत,दु:ख दुरमति खोई॥
कामधेनु तुम सुरतरु छाया। निराकार की अद्भुत माया॥
तुम्हरी शरण गहै जो कोई। तरै सकल संकट सों सोई॥

सरस्वती लक्ष्मी तुम काली। दिपै तुम्हारी ज्योति निराली॥
तुम्हरी महिमा पार न पावैं। जो शारद शत मुख गुन गावैं॥
चार वेद की मातु पुनीता। तुम ब्रह्माणी गौरी सीता॥
महामंत्र जितने जग माहीं। कोऊ गायत्री सम नाहीं॥
सुमरित हिय में ज्ञान प्रकासै। आलस, पाप, अविद्या नासै॥
सृष्टि बीज, जग जननि भवानी। कालरात्रि वरदा कल्याणी॥
ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, सुर जेते। तुम सों पावें सुरता तेते॥
तुम भक्तन की भक्त तुम्हारे। जननिहिं पुत्र प्राण ते प्यारे॥
महिमा अपरंपार तुम्हारी । जै-जै-जै त्रिपदा भय हारी॥
पूरित सकल ज्ञान-विज्ञाना। तुम सम अधिक न जग में आना॥
तुमहिं जानि कछु रहै न शेषा। तुमहि पाय कछु रहै न क्लेशा॥
जानत तुमहिं, तुमहिं ह्वै जाई। पारस परसि कुधातु सुहाई॥
तुम्हरी शक्ति दिपै सब ठाईं। माता तुम सब ठौर समाईं॥
ग्रह-नक्षत्र-ब्रह्मांड घनेरे । सब गतिवान तुम्हारे प्रेरे॥
सकल सृष्टि की प्राण विधाता। पालक, पोषक,नाशक, त्राता॥
मातेश्वरी दया व्रत धारी। तुम सन तरे पातकी भारी॥
जापर कृपा तुम्हारी होई। तापर कृपा करें सब कोई॥
मंद बुद्धि ते बुधि, बल पावें। रोगी रोग रहित ह्वै जावें॥
दारिद मिटै, कटै सब पीरा। नाशै दुःख, हरै भव भीरा॥
गृह क्लेश, चित चिंता भारी। नासै गायत्री भय हारी॥
संतति हीन सुसंतति पावें। सुख संपत्ति-युत मोद मनावें॥
भूत-पिशाच सबै भय खावें। यम के दूत निकट नहिं आवें॥
जो सधवा सुमिरें चित लाई। अछत सुहाग सदा सुखदाई॥
घर वर सुखप्रद लहैं कुमारी। विधवा रहें सत्य व्रत धारी॥
जयति जयति जगदंब भवानी। तुम सम और दयालु न दानी॥
जो सद्गुरु सों दीक्षा पावें। सो साधन को सफल बनावें॥
सुमिरन करें सुरुचि बड़भागी। लहैं मनोरथ गृही-विरागी॥
अष्ट सिद्धि, नवनिधि की दाता॥ सब समर्थ गायत्री माता॥

ऋषि, मुनि, यती, तपस्वी, योगी। आरत, अर्थी, चिंतित भोगी॥
जो-जो शरण तुम्हारी आवें। सो-सो मन वांछित फल पावें॥
बल, बुद्धि, विद्या, शील सुभाऊ। धन, वैभव,यश, तेज उछाऊ॥
सकल बढ़ें उपजें सुख नाना। जो यह पाठ करै धरि ध्याना॥

यह चालीसा भक्ति युत, पाठ करै जो कोय।
तापर कृपा प्रसन्नता, गायत्री की होय॥

गायत्री यज्ञ—उपयोगिता और आवश्यकता

भारतीय संस्कृति का उद्गम, ज्ञान-गंगोत्री गायत्री ही है। भारतीय धर्म का पिता यज्ञ को माना जाता है। गायत्री को सद्विचार और यज्ञ को सत्कर्म का प्रतीक मानते हैं। इन दोनों का सम्मिलित स्वरूप सद्भावनाओं एवं सत्प्रवृत्तियों को बढ़ाते हुए विश्व-शांति एवं मानव कल्याण का माध्यम बनता है और प्राणिमात्र के कल्याण की संभावनाएँ बढ़ती हैं।

यज्ञ शब्द के तीन अर्थ हैं—(१) देव पूजा, (२) दान, (३) संगतिकरण। संगतिकरण का अर्थ है—संगठन। यज्ञ का एक प्रमुख उद्देश्य धार्मिक प्रवृत्ति के लोगों को सत्प्रयोजन के लिए संगठित करना भी है। इस युग में संघशक्ति ही सबसे प्रमुख है। परास्त देवताओं को पुनः विजयी बनाने के लिए प्रजापति ने उनकी पृथक-पृथक शक्तियों का एकीकरण करके, संघशक्ति के रूप में दुर्गाशक्ति का प्रादुर्भाव किया था। उस माध्यम से उनके दिन फिरे और संकट दूर हुए। मानवजाति की समस्या का हल सामूहिक शक्ति एवं संघबद्धता पर निर्भर है, एकाकी, व्यक्तिवादी-असंगठित लोग दुर्बल और स्वार्थी माने जाते हैं। गायत्री यज्ञों का वास्तविक लाभ सार्वजनिक रूप से, जन सहयोग से संपन्न कराने पर ही उपलब्ध होता है।

यज्ञ का तात्पर्य है—त्याग, बलिदान, शुभ कर्म। अपने प्रिय खाद्य पदार्थों एवं मूल्यवान सुगंधित पौष्टिक द्रव्यों को अग्नि एवं वायु के माध्यम से समस्त संसार के कल्याण के लिए यज्ञ द्वारा वितरित किया जाता है। वायु शोधन से सबको आरोग्यवर्द्धक साँस

लेने का अवसर मिलता है। हवन हुए पदार्थ वायुभूत होकर प्राणिमात्र को प्राप्त होते हैं और उनके स्वास्थ्यवर्द्धन, रोग निवारण में सहायक होते हैं। यज्ञकाल में उच्चरित वेद मंत्रों की पुनीत शब्द-ध्वनि आकाश में व्याप्त होकर लोगों के अंतःकरण को सात्विक एवं शुद्ध बनाती है। इस प्रकार थोड़े ही खरच एवं प्रयत्न से यज्ञकर्त्ताओं द्वारा संसार की बड़ी सेवा बन पड़ती है।

वैयक्तिक उन्नति और सामाजिक प्रगति का सारा आधार सहकारिता, त्याग, परोपकार आदि प्रवृत्तियों पर निर्भर है। यदि माता अपने रक्त-मांस में से एक भाग नए शिशु का निर्माण करने के लिए न त्यागे, प्रसव की वेदना न सहे, अपना शरीर निचोड़कर उसे दूध न पिलाए, पालन-पोषण में कष्ट न उठाए और ये सब कुछ नितांत निःस्वार्थ भाव से न करे तो फिर मनुष्य का जीवन धारण कर सकना भी संभव न हो। इसलिए कहा जाता है कि मनुष्य का जन्म यज्ञ भावना के द्वारा या उसके कारण ही संभव होता है। गीताकार ने इसी तथ्य को इस प्रकार कहा है कि प्रजापति ने यज्ञ को मनुष्य के साथ जुड़वाँ भाई की तरह पैदा किया और यह व्यवस्था की कि एक दूसरे का अभिवर्द्धन करते हुए दोनों फलें-फूलें।

गायत्री उपासना से हवन का घनिष्ठ संबंध है। गायत्री उपासक को अपनी सुविधा और स्थिति के अनुसार हवन भी करते रहना चाहिए। बड़े यज्ञों की हवन-विधि कर्मकांड भास्कर में छापी जा चुकी है, पर जिन्हें नित्य हवन करना हो या जिनके पास बहुत ही कम समय हो, उनके लिए और भी संक्षिप्त विधि नीचे दी जा रही है। जप के बाद हवन किया जाता है। हवन करना हो तो विसर्जन, अर्घ्यदान की उपासना समाप्ति की क्रियाएँ यज्ञ के बाद ही करनी चाहिए। हवन में यदि अन्य व्यक्ति भी भाग लें तो उनसे षट्कर्म करा के तब हवन में सम्मिलित करना चाहिए।

(दैनिक साधनाक्रम पूरा कर लेने के पश्चात अग्नि स्थापन से नित्य यज्ञक्रम प्रारंभ करें।)

दैनिक हवन

॥ अग्निस्थापनम्॥

कुण्ड या वेदी को शुद्ध करके उस पर समधिाएँ चिन लें, फिर अग्नि स्थापना के लिए चम्मच से कपूर या घी में भिगोई हुई रूई की बत्ती को जलाकर उन समिधाओं के बीच में स्थापित करें, मंत्र।

**ॐ भूर्भुवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना, पृथिवीव वरिम्णा।
तस्यास्ते पृथिवि देवयजनि, पृष्ठेऽग्निमन्नादमन्नाद्यायादधे॥
अग्निं दूतं पुरोदधे, हव्यवाहमुपब्रुवे। देवाँ ऽआसादयादिह।
ॐ अग्नये नमः। आवाहयामि, स्थापयामि ध्यायामि।
गन्धाक्षतम् पुष्पाणि, धूपम् दीपम्, नैवेद्यम् समर्पयामि॥**

॥ अग्नि प्रदीपनम्॥

जब अग्नि समिधाओं में प्रवेश कर जावे, तब उसे पंखे से प्रज्वलित करें और निम्न मंत्र बोलें।

ॐ उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि, त्वमिष्टा पूर्ते स ꣳ सृजेथामयं च। अस्मिन्त्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन्। विश्वेदेवा यजमानश्च सीदत।

॥ समिधाधानम्॥

तत्पश्चात निम्न चार मंत्रों से छोटी-छोटी चार समिधाएँ, प्रत्येक मंत्र के उच्चारण के बाद क्रम से समिधा के दोनों सिरे घी में डुबोकर अग्नि में डालें।

(१) ॐ अयन्त इध्म आत्मा, जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व। चेद्ध वर्धय चास्मान् प्रजया, पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन, अन्नाद्येन समेधय स्वाहा। इदं अग्नये जातवेदसे इदं न मम॥

**(२) ॐ समिधाऽग्निं दुवस्यत, घृतैर्बोधयतातिथिम्।
आस्मिन् हव्या, जुहोतन स्वाहा। इदं अग्नये इदं न मम॥**

(३) ॐ सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्रं जुहोतन । अग्नये जातवेदसे स्वाहा। इदं अग्नये जातवेदसे इदं न मम॥

(४) ॐ तं त्वा समिद्भिरंगिरो, घृतेन वर्धयामसि। बृहच्छोचा यविष्ठ्य स्वाहा। इदं अग्नये अंगिरसे इदं न मम॥

॥ जल प्रसेचनम्॥

तत्पश्चात प्रोक्षणीपात्र या आचमनी में जल लेकर खड़े हो जाएँ, मंत्र के साथ निर्दिष्ट दिशाओं में सुरक्षा के साथ जल डालें। इसके ये मंत्र हैं—

ॐ अदितेऽनुमन्यस्व। (इति पूर्वे)

ॐ अनुमतेऽनुमन्यस्व। (इति पश्चिमे)

ॐ सरस्वत्यऽनुमन्यस्व। (इति उत्तरे)

ॐ देव सवितः प्रसुव यज्ञं, प्रसुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्यो गन्धर्वः केतपूः, केतं नः पुनातु, वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु॥

(इति चतुर्दिक्षु)

॥ आज्याहुतिः ॥

नीचे लिखी आहुतियाँ केवल घृत की देवें आहुति के बाद स्रुवा (घी होमने का चम्मच) में बचा हुआ घृत इदं न मम के उच्चारण के साथ प्रणीता पात्र (भरे हुए काष्टपात्र या कटोरी) में टपकाते जाएँ। यही टपकाया हुआ घी अंत में अवघ्राण के काम आता है।

(१) ॐ प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये इदं न मम॥

(२) ॐ इन्द्राय स्वाहा। इदं इन्द्राय इदं न मम॥

(३) ॐ अग्नये स्वाहा। इदं अग्नये इदं न मम॥

(४) ॐ सोमाय स्वाहा। इदं सोमाय इदं न मम॥

(५) ॐ भूःस्वाहा। इदं अग्नये इदं न मम॥

(६) ॐ भुवः स्वाहा। इदं वायवे इदं न मम॥

(७) ॐ स्वः स्वाहा। इदं सूर्याय इदं न मम॥

॥ गायत्री मंत्र की आहुतियाँ॥

इसके पश्चात गायत्री मंत्र से जितनी आहुतियाँ पाँच, बारह, चौबीस आदि देनी हों, हवन-सामग्री तथा घी से देनी चाहिए। यदि

दो व्यक्ति हवन करने वाले हों तो एक सामग्री, दूसरा घी होमे। यदि एक ही व्यक्ति हो तो सामग्री में घी मिलाकर आहुति देवें।

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयात् स्वाहा।

इदं गायत्र्यै इदं न मम॥

महामृत्युंजय मंत्र की आहुतियाँ अंत में देनी चाहिए। विशेष अवसर पर अन्य आहुतियाँ भी दे सकते हैं।

॥ स्विष्टकृत होमः ॥

अभीष्ट संख्या में मंत्रों की आहुतियाँ देने के पश्चात मिष्टान्न, खीर, हलुआ आदि पदार्थों की एक आहुति निम्न मंत्र से दें।

ॐ यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं, यद्वान्यूनमिहाकरम्।
अग्निष्टत् स्विष्टकृद् विद्यात्सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे।
अग्नये स्विष्टकृते सुहुतहुते, सर्व प्रायश्चित्ताहुतीनां कामानां, समर्द्धयित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा। इदम् अग्नये स्विष्टकृते इदं न मम।

॥ पूर्णाहुतिः ॥

इसके बाद स्रुचि (काष्टपात्र या चम्मच) में घृत समेत सुपाड़ी रखकर पूर्णाहुति दें।

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥
ॐ पूर्णादर्वि परापत सुपूर्णा पुनरापत।
वस्नेव विक्रीणा वहा इषमूर्ज ᳬशतक्रतो स्वाहा॥
ॐ सर्वं वै पूर्ण ᳬस्वाहा

॥ वसोर्धारा ॥

स्रुचिपात्र में घी भरकर धार बाँधकर धीरे-धीरे छोड़ें।

ॐ वसोः पवित्रमसि शतधारं, वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम्। देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः, पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः स्वाहा।

॥ आरती ॥

तत्पश्चात निम्न मंत्रों को पढ़ते हुए आरती उतारें।

ॐ यं ब्रह्मा वरुणेन्द्ररुद्रमरुतः, स्तुन्वन्ति दिव्यैःस्तवैः
वेदैः सांगपदक्रमोपनिषदैः, गायन्ति यं सामगाः।
ध्यानावस्थित तद्‌गतेन मनसा, पश्यन्ति यं योगिनो,
यस्यान्तं न विदुः सुरासुरगणाः, देवाय तस्मै नमः॥

॥ घृत अवघ्राण ॥

प्रणीता पात्र में इदं न मम के साथ टपकाए हुए घृत को हथेलियों पर लगाकर यज्ञ कुण्ड की ओर हथेलियों को करें, तपाएँ और मंत्रोच्चार के पश्चात सूँघें तथा मुख,नेत्र, कर्ण आदि पर लगाएँ। मंत्र निम्न प्रकार है—

ॐ तनूपा अग्नेऽसि, तन्वं मे पाहि।
ॐ आयुर्दा अग्नेऽसि, आयुर्मेदेहि
ॐ वर्चो दा अग्नेऽसि, वर्चो मे देहि।
ॐ अग्ने यन्मे तन्वाऽ ऊन्तन्मऽआपृण।
ॐ मेधां मे देवः, सविता आदधातु।
ॐ मेधां मे देवी, सरस्वती आदधातु।
ॐ मेधां मे अश्विनौ, देवावाधत्तां पुष्करस्रजौ।

॥ भस्म धारणम् ॥

स्फ्य (काष्टपात्र) से यज्ञ भस्म लेकर अनामिका उँगली से निम्न मंत्र द्वारा क्रमशः ललाट, ग्रीवा, दक्षिण बाहुमूल तथा हृदय पर लगावें।

ॐ त्रयायुषं जमदग्नेः, इति ललाटे।
ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषम्, इति ग्रीवायाम्।
ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषम्, इति दक्षिण बाहुमूले।
ॐ तन्नोऽस्तु त्र्यायुषम्, इति हृदि।

॥ नमस्कार ॥

भगवान के चरणों में अपने को समर्पित करने की भावना करते हुए नमस्कार करें।

ॐ नमोऽस्त्वन्ताय सहस्रमूर्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे।
सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्रकोटीयुगधारिणे नमः॥

॥ शुभकामना ॥

सच्चा उपासक सभी के कल्याण की कामना करता है। अतः सबके कल्याण की प्रार्थना के साथ निम्नलिखित मंत्र बोलते हुए शुभकामना की क्रिया करें।

ॐ स्वस्ति प्रजाभ्यःपरिपालयन्तां न्याय्येनमार्गेण महीं महीशाः।
गोब्राह्मणेभ्यः शुभमस्तु नित्यं लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु॥
सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चिद् दुःखमाप्नुयात्॥

॥ शान्ति-अभिषिंचनम् ॥

पूजा स्थान के दिव्य वातावरण में रखा हुआ जल कलश अपने भीतर उन मंगलकारक दिव्य तत्त्वों को धारण कर लेता है, जो मनुष्य के शारीरिक स्वास्थ्य, मानसिक शांति एवं आत्मिक गरिमा की अभिवृद्धि में सहायक होते हैं। कलश का जल लेकर पुष्प के द्वारा मंत्र बोलते हुए छिड़कें। मंत्र इस प्रकार है।

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ౘं शान्तिः, पृथिवी शान्तिरापः, शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः, शान्तिर्ब्रह्मशान्तिः, सर्व ౘं शान्तिः, शान्तिरेव शान्तिः, सा मा शान्तिरेधि॥ ॐ शान्तिः, शान्तिः, शान्तिः।
सर्वारिष्ट-सुशान्तिर्भवतु॥

॥ सूर्यार्घ्यदान ॥

इसके पश्चात पूजा वेदी पर रखे छोटे कलश का जल सूर्य की दिशा में अर्घ्य रूप में निम्न मंत्र के उच्चारण के साथ चढ़ाया जाता है।

ॐ सूर्यदेव! सहस्रांशो, तेजोराशे जगत्पते।
अनुकम्पय मां भक्त्या, गृहाणार्घ्यं दिवाकर॥
ॐ सूर्याय नमः, आदित्याय नमः, भास्कराय नमः।

भावना करें कि जल आत्मसत्ता का प्रतीक है एवं सूर्य विराट ब्रह्म का तथा हमारी समस्त संपदा समष्टि के लिए समर्पित-विसर्जित हो रही है।

॥ प्रदक्षिणा ॥

दाएँ हाथ की ओर घूमते हुए अपने स्थान पर खड़े होकर एक परिक्रमा कर लें।

ॐ यानि कानि च पापानि, ज्ञाताज्ञातकृतानि च।
तानि सर्वाणि नश्यन्ति, प्रदक्षिण-पदे-पदे॥

॥ विसर्जन ॥

इतना सब करने के बाद पूजा स्थल पर देव सत्ताओं की विदाई के लिए निम्न मंत्रों के उच्चारण के साथ करबद्ध, नतमस्तक हो नमस्कार किया जाए एवं अक्षत, पुष्प पूजा स्थान पर छोड़े जाएँ।

उत्तमे शिखरे देवि, भूम्यां पर्वत मूर्धनिः।
ब्राह्मणेभ्यो ह्यनुज्ञाता, गच्छ देवि यथासुखम्॥
यान्तु देवगणाः सर्वे, पूजामादाय मामकीम्।
इष्टकामसमृद्ध्यर्थं, पुनरागमनाय च ॥

॥ आरती गायत्री माता की ॥

जयति जय गायत्री माता, जयति जय गायत्री माता।
आदि-शक्ति तुम अलख निरंजन जग पालन कर्त्री।
दुःख, शोक, भय, क्लेश, कलह, दारिद्रय दैन्य हर्त्री॥
ब्रह्मरूपिणी, प्रणतपालिनी, जगतधातृ अंबे।
भवभयहारी जनहितकारी, सुखदा जगदंबे॥
भयहारिण भव तारिणि अनघे, अज आनंद राशी।
अविकारी, अघहरी, अविचलित, अमले अविनाशी॥
कामधेनु सत्चित् आनंदा, जय गंगा गीता।
सविता की शाश्वती शक्ति तुम सावित्री सीता॥
ऋक्, यजु, साम, अथर्व प्रणयिनी, प्रणव महामहिमे।

कुंडलिनी सहस्रार, सुषुम्ना शोभा गुण गरिमे॥
स्वाहा, स्वधा, शची, ब्रह्माणी, राधा, रुद्राणी।
जय सतरूपा वाणी, विद्या, कमला, कल्याणी॥
जननी हम हैं दीन-हीन, दुःख-दारिद्र के घेरे।
यदपि कुटिल-कपटी, कपूत, तऊ बालक हैं तेरे॥
स्नेह सनी करुणामयी माता ! चरण शरण दीजै।
बिलख रहे हम शिशु, सुत तेरे दया दृष्टि कीजै॥
काम क्रोध, मद, लोभ, दंभ, दुर्भाव, द्वेष हरिए।
शुद्ध बुद्धि, निष्पाप हृदय, मन को पवित्र करिए॥
तुम समर्थ सब भाँति तारिणी, तुष्टि-पुष्टि त्राता।
सत मारग पर हमें चलाओ, जो है सुख दाता॥
जयति जय गायत्री माता, जयति जय गायत्री माता॥

॥ यज्ञ महिमा ॥

यज्ञ रूप प्रभो हमारे, भाव उज्ज्वल कीजिए।
छोड़ देवें छल कपट को, मानसिक बल दीजिए॥
वेद की बोलें ऋचाएँ, सत्य को धारण करें।
हर्ष में हों मग्न सारे, शोक सागर से तरें॥
अश्वमेधादिक रचाएँ, यज्ञ पर उपकार को।
धर्म मर्यादा चलाकर, लाभ दें संसार को॥
नित्य श्रद्धा-भक्ति से, यज्ञादि हम करते रहें।
रोग पीड़ित विश्व के संताप सब हरते रहें॥
कामना मिट जाए मन से, पाप-अत्याचार की।
भावनाएँ शुद्ध होवें, यज्ञ से नर-नारि की॥
लाभकारी हो हवन, हर जीवधारी के लिए।
वायु-जल सर्वत्र हों, शुभ गन्ध को धारण किए॥
स्वार्थ भाव मिटे हमारा, प्रेम-पथ विस्तार हो।
इदं न मम का सार्थक, प्रत्येक में व्यवहार हो॥

हाथ जोड़, झुकाए मस्तक, वंदना हम कर रहे।
नाथ करुणारूप करुणा, आपकी सब पर रहे॥
यज्ञरूप प्रभो हमारे, भाव उज्ज्वल कीजिए।
छोड़ देवें छल-कपट को, मानसिक बल दीजिए॥

हमारा युग निर्माण सत्संकल्प

(१) हम ईश्वर को सर्वव्यापी, न्यायकारी मानकर उसके अनुशासन को अपने जीवन में उतारेंगे।

(२) शरीर को भगवान का मंदिर समझकर आत्मसंयम और नियमितता द्वारा आरोग्य की रक्षा करेंगे।

(३) मन को कुविचारों और दुर्भावनाओं से बचाए रखने के लिए स्वाध्याय एवं सत्संग की व्यवस्था रखे रहेंगे।

(४) इंद्रिय संयम, अर्थ संयम, समय संयम और विचार संयम का सतत अभ्यास करेंगे।

(५) अपने आप को समाज का एक अभिन्न अंग मानेंगे और सबके हित में अपना हित समझेंगे।

(६) मर्यादाओं को पालेंगे, वर्जनाओं से बचेंगे, नागरिक कर्त्तव्यों का पालन करेंगे और समाजनिष्ठ बने रहेंगे।

(७) समझदारी, ईमानदारी, जिम्मेदारी और बहादुरी को जीवन का एक अविच्छिन्न अंग मानेंगे।

(८) चारों और मधुरता, स्वच्छता, सादगी एवं सज्जनता का वातावरण उत्पन्न करेंगे।

(९) अनीति से प्राप्त सफलता की अपेक्षा नीति पर चलते हुए असफलता को शिरोधार्य करेंगे।

(१०) मनुष्य के मूल्यांकन की कसौटी उसकी सफलताओं, योग्यताओं एवं विभूतियों को नहीं, उसके सद्विचारों और सत्कर्मों को मानेंगे।

(११) दूसरों के साथ वह व्यवहार नहीं करेंगे, जो हमें अपने लिए पसंद नहीं।

(१२) नर-नारी परस्पर पवित्र दृष्टि रखेंगे।

(१३) संसार में सत्प्रवृत्तियों के पुण्य प्रसार के लिए अपने समय, प्रभाव, ज्ञान, पुरुषार्थ एवं धन का एक अंश नियमित रूप से लगाते रहेंगे।

(१४) परंपराओं की तुलना में विवेक को महत्त्व देंगे।

सज्जनों को संगठित करने, अनीति से लोहा लेने और नवसृजन की गतिविधियों में पूरी रुचि लेंगे।

(१५) राष्ट्रीय एकता एवं समता के प्रति निष्ठावान रहेंगे। जाति लिंग, भाषा, प्रांत, संप्रदाय आदि के कारण परस्पर कोई भेदभाव न बरतेंगे।

(१६) मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता आप है, इस विश्वास के आधार पर हमारी मान्यता है कि हम उत्कृष्ट बनेंगे और दूसरों को श्रेष्ठ बनाएँगे, तो युग अवश्य बदलेगा।

(१७) "हम बदलेंगे-युग बदलेगा" "हम सुधरेंगे-युग सुधरेगा" इस तथ्य पर हमारा पूर्ण विश्वास है।

मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा-३